

॥ श्री चंद्रप्रभ जिन पूजन ॥

रचयिता – राजेश कासलीवाल, उज्जैन

स्थापना

(रोला छंद)

सम्यक् रत्नत्रय धर भायी षोडश भावन ।
सर्व हितंकर पाया पद तीर्थकर पावन ।
धर्म देशना धर्म चक्र का किया प्रवर्तन ।
हुआ अहो जयवंत जगत में श्री जिन शासन ।

(दोहा)

अष्टम जिन श्री चंद्रप्रभ, अष्टम भू पर वास ।
अष्ट द्रव्य से अर्चना, मम उर करो निवास ।

ॐ ह्रीं श्री चंद्रप्रभ जिनेंद्र अत्र अवतर अवतर संवौषट् इत्याह्वाननम् !

ॐ ह्रीं श्री चंद्रप्रभ जिनेंद्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः इति स्थापनम् !

ॐ ह्रीं श्री चंद्रप्रभ जिनेंद्र अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् परि पुष्पांजलि क्षिपेत !

(वीर छंद)

तन को निज, निज को भूल भ्रमण भव-भव में दर-दर जन्म मरण ।
कर-कर पर में अपनापन अपना पा न सका निज जीवन क्षण ॥
परभाव पराभव हो प्रभुवर! वरते ना दुखमय जन्म मरण ।
हे चितहर चंद्रप्रभ जिनवर! जल अर्पण करता आप चरण ॥

ॐ ह्रीं श्री चंद्रप्रभ जिनेंद्राय जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

फेरफार निज-पर परिणति में कर देने की आकुलता ।
संताप व्यर्थ का हेतु गर्त का दूर करो जिन व्याकुलता ॥
तुम क्षोभ भाव का कर अभाव भावित शीतल ज्यों सोमकिरण ।
हे चितहर चंद्रप्रभ जिनवर! चंदन अर्पण है आप चरण ॥

ॐ ह्रीं श्री चंद्रप्रभ जिनेंद्राय संसार-ताप-विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षणिकाओं को अक्षत माना क्षण-क्षण क्षतियों से क्षुब्ध रहा ।
विस्मय रे! क्यों विश्वास किया क्यों क्षणभावों में लुब्ध रहा ?
आलंबन अक्षय का अक्षत आनंदित हो प्रभुवर प्रतिक्षण ।
हे चितहर चंद्रप्रभ जिनवर! अक्षत अर्पण है आप चरण ॥

ॐ ह्रीं श्री चंद्रप्रभ जिनेंद्राय अक्षय-पद-प्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

विषमय विषयों में वासित हो वंचित चिद् पुष्प सुवासों से ।
दिन-रात रतिपति-पाश-वशी मैं पीड़ित पतित कुवासों से ॥
चंचल-चित चिद्-आँगन में अब आकर थिर हो ब्रह्मवरण ।
हे चितहर चंद्रप्रभ जिनवर! पुष्पों से अर्चन आप चरण ॥

ॐ ह्रीं श्री चंद्रप्रभ जिनेन्द्राय कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

परचाह स्वयं ही दाह नाश क्या क्षुधा-दाह का कर पाती ।
अतृप्त अनादि अतः रहा अब चाह अंत हो अकुलाती ॥
तुम तृप्त हुए चिद्-गुण-चरु-रस ग्रहते हो प्रभुवर रे क्षण-क्षण ।
हे चितहर चंद्रप्रभ जिनवर! दिवचरु हैं अर्पण आप चरण ॥

ॐ ह्रीं श्री चंद्रप्रभ जिनेन्द्राय क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिस प्रज्ञा में आलोकित यह लोक लोक के द्रव्य अरे ।
अनुभव में नित आने वाली निज को ही ना वह गम्य करे ॥
तुमने तम नाश किया प्रभुवर! ग्रहती निज-पर सब एक किरण ।
हे चितहर चंद्रप्रभ जिनवर! यह दीपक अर्पण आप चरण ॥

ॐ ह्रीं श्री चंद्रप्रभ जिनेन्द्राय मोहांधकार-विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अपना भ्रम अपना तम अपना चंचल परिणाम प्रदूषण है ।
क्यों कोई पुद्गल रज आए ना पर का कोई दूषण है ॥
निज थिरता बल से ध्यान अनल से ध्वस्त दोष हो आत्मप्रवण ।
हे चितहर चंद्रप्रभ जिनवर! यह धूप समर्पण आप चरण ॥

ॐ ह्रीं श्री चंद्रप्रभ जिनेन्द्राय अष्टकर्म-दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल-शुभ भाव-अशुभ मन भाए पाए आकुल व्याकुलता ।
बस एक निजातम शुद्धभाव ना भाया पाई न निराकुलता ॥
है शुद्धभाव परिणाम धाम-ध्रुव धवल-युगल तेरा विवरण ।
हे चितहर चंद्रप्रभ जिनवर! फल करता अर्पण आप चरण ॥

ॐ ह्रीं श्री चंद्रप्रभ जिनेन्द्राय मोक्षफल-प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जो मिल न सका ना मिल पाएगा पर-वैभव क्या मोल करें ।
जो रहा सदा ही साथ, साथ क्या, वह तू है अनमोल अरे ॥
तुम निज में निज परिपूर्ण प्रभो! मैं पूर्ण भाव का करूँ वरण ।
हे चितहर चंद्रप्रभ जिनवर! यह अर्घ्य समर्पण आप चरण ॥

ॐ ह्रीं श्री चंद्रप्रभ जिनेन्द्राय अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचकल्याणक अर्घ्य

(छंद धत्तानंद)

तीर्थकर वंदें नित अभिनंदें, पद अरविंदें शीश धरें ।
पाँचों कल्याणक समकित दायक मोद बधायक भक्ति करें ॥

(छंद विधाता)

पंचमी चैत्र कृष्णा थी, सुपन सोलह लखे माँ ने ।
रे नगरी चंद्रपुरी नभ पर, हर्ष बादल लगे छाने ॥
जो सन्मुख जीव समकित के, स्वप्न वो मोक्ष के देखे ।
अरे संसार अब कितना, नहीं लेता अहो लेखे ॥

ॐ ह्रीं चैत्र-कृष्णा-पंचम्यां गर्भकल्याणक-प्राप्ताय श्री चंद्रप्रभ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पौष की कृष्ण ग्यारस को, मोद तिहुँलोक में छाया ।
हुआ जो जन्म प्रभुवर का, मनु सम्यक्त्व ही आया ॥
सहस कलसा सहस लोचन, सहज तांडव महा उत्सव ।
निजातम ज्ञान श्रद्धा हो, अरे तब शेष कितने भव ॥

ॐ ह्रीं पौष-कृष्णा-एकादश्यां जन्मकल्याणक-प्राप्ताय श्री चंद्रप्रभ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देख नभ-दामिनी उमड़ा, महा वैराग्य तिथि वह ही ।
छोड़ कानन चले प्रभुवर, विभव संसार का सब ही ॥
नहीं आतम सिवा कोई, विषय श्रद्धान का होता ।
अहो मुनिराज मन भी त्यों, किसी के संग ना खोता ॥

ॐ ह्रीं पौष-कृष्णा-एकादश्यां दीक्षाकल्याणक-प्राप्ताय श्री चंद्रप्रभ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञान जब सब सिमट आया, समाया एक ज्ञायक में ।
जगत निःशेष चल आया, अरे तब ज्ञान के क्षण में ॥
सप्तमी कृष्ण फागुन की, सभा द्वादश लगी प्यारी ।
खिरी ओंकार-धुनि पावन, अनुपम सर्वहितकारी ॥

ॐ ह्रीं फाल्गुन-कृष्णा-सप्तम्यां केवलज्ञानकल्याणक-प्राप्ताय श्री चंद्रप्रभ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लखा जो आत्म अनुभव में, वही श्रद्धान में धारा ।
उतर आया परिणति में, निजातम का विभव सारा ॥
शिखर सम्मेद की पावन, अविनाशी ललित भू थी ।
प्रभो लोकाग्र पर पहुँचे, सप्तमी शुक्ल फागुन की ॥

ॐ ह्रीं फाल्गुन-शुक्ल-सप्तम्यां मोक्षकल्याणक-प्राप्ताय श्री चंद्रप्रभ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

चेतन चंचल चित्त को, चरण चंद्रप्रभ डाल ।
एकचित्त एकाग्र हो, होने को जयमाल ॥

(छंद रेखता - तर्जः जगाया तुमने कितनी बार)

प्रभो श्री चंद्रप्रभ जिनराज, तीर्थ के नायक अष्टम देव ।
तुम्हारी शांत छवि मनहार, लखें नित शीश नमें स्वयमेव ॥
प्रभु हो वीतराग सर्वज्ञ, किया सबके हित का उपदेश ।
नहीं है दोष लेश भी शेष, अतः परिणति भी पूर्ण अशेष ॥

करा रे पहिले भेद विज्ञान, किया श्रद्धान निजातम का ।
अरे तत्वों का ज्ञान यथार्थ, नाश रे मोह महातम का ॥
कषाएं नंत-अनुबन्धी, जो करती बंध अनंतानंत ।
करा रे सर्वप्रथम ही अंत, मोक्ष के मारग में भगवंत ॥

स्वरूपाचरण नाम चारित्र, बाह्य में किंचित व्रत ना होय ।
अष्ट गुण समकित की पहिचान, दोष पच्चीसों सब ही खोय ॥
थिरता क्षण-क्षण बढ़ती जाय, अप्रत्याख्यान कषाय विनाश ।
अरे गुणश्रेणी निर्जर होय, झरे रे कर्म गुणित हो राश ॥

अंतर आतम शुद्धि विशेष, बाहिर अणुव्रत के शुभभाव ।
प्रतिमा एकादश उर धार, प्रति में बढ़ता शुद्ध स्वभाव ॥
अरे यह एकदेश चारित्र, भूमिका मुनिवर बनने की ।
रहे जो घट-पट घर के राग, शेष उन सबको हनने की ॥

अहो निज-पर के चिंतन साथ, भावना द्वादश तजने राग ।
करे रे नित-नित चित में ध्यान, बढ़े रे पल-पल उर वैराग ॥
राग तज धरें दिगंबर वेश, करें चौबीस परिग्रह त्याग ।
महाव्रत पाँच समिति धार, विषय पंचेंद्रिय के तज राग ॥

और सब मूलगुण अठबीस, सकल चारित्र जगत विख्यात ।
करें वे आत्मध्यान बस और, पठन आगम का रे दिन-रात ॥
नहीं चारित्र क्रिया जड़ की, नहीं चारित्र अरे शुभभाव ।
कषाएं हुई जहाँ रे क्षीण, चरित निज थिरता आत्मस्वभाव ॥

नियत चारित्र सदा निजभाव, सकल सहचर व्यवहार प्रमाण ।
ध्यान में क्षण-क्षण हो आरूढ़, नियत हो पल-पल वृद्धिमान ॥
थिरता-पूर्ण कषाएं-क्षीण यही चारित्र यथाख्याती ।
यही है साध्यदशा परिपूर्ण, यही है साधक की थाती ॥

लहा तब केवलज्ञान जिनेश, हने रे सकल घातिया कर्म ।
दिया उपदेश भवार्णव पार, अरे होने बतलाया धर्म ॥
किये सब कर्म अघाती घात, शिखर सम्मेद धरा विख्यात ।
ललित से क्षणिक काल में उर्ध्व, चंद्रप्रभ पहुँचे राजू सात ॥

(छंद धत्तानंद)

तीर्थकर प्रभुवर हितकर दुखहर, भवतर शिवकर सुहित विभो ।
तुमको नित ध्यावें तुम गुण गावें, शिवसुख पावें शीघ्र प्रभो ॥

ॐ ह्रीं श्री चंद्रप्रभ जिनेन्द्राय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

जिन से निज को जानकर, श्रद्धें जिन निज दोय ।
चरण चंद्रप्रभ चिन्ह चलें, वरण मुक्ति का होय ॥

इति पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।